महाराणा कुम्भा

व्यक्तित्व एवं कृतित्व

प्रधान सम्पादक

प्रो. के.एस. गुप्ता

सम्पादक

डॉ. ओम जी उपाध्याय • डॉ. राजेश कुमार • डॉ. सौरभ कुमार मिश्र

Scanned with CamScanner

महाराणा कुम्भा :
व्यक्तित्त्व एवं कृतित्व

(राष्ट्रीय संगोष्ठी)

प्रधान संपादक

प्रो.के.एस.गुप्ता

(सेवानिवृत्त आचार्य) मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर/ संगोष्ठी समन्वयक

सम्पादक

डॉ. ओम जी उपाध्याय

निदेशक, (शोध एवं प्रशासन), भा.इ.अ.प., नई दिल्ली

डॉ. राजेश कुमार

निदेशक, (जे.पी. एवं एल), भा.इ.अ.प., नई दिल्ली

डॉ. सौरभ कुमार मिश्र

उपनिदेशक, (शोध पत्रिका), भा.इ.अ.प., नई दिल्ली

राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर

Scanned with CamScanner

विषय–सूची

क्र.सं.	विषय	पेज सं.
	Foreword	5
	सम्पादकीय	7-117
	महाराणा कुम्भा : व्यक्तित्व एवं कृतित्व	13-14
अध्याय - 1 स्रोत		
1.	महाराणा कुम्भा कालीन शिलालेखों का सांस्कृतिक अध्ययन प्रो. एस.पी.व्यास	19-35
2.	Madaria: a Medieval Settlement: J.S. Kharakwal, H. Chaudhary and V. Mali	36-48
3.	महाराणा कुम्भा कालीन ताम्रपत्र डॉ. मोहब्बतसिंह राठौड़	49-53
4.	रणकपुर जैन मन्दिर प्रशस्ति का ऐतिहासिक महत्त्व डॉ. देव कोठारी	54-66
5.	'' मेवाड़ के ख्यात–ग्रन्थों में महाराणा कुम्भा'' डॉ. राजेन्द्रनाथ पुरोहित	67-70
6.	महाराणा कुम्भा के राज्यकाल में आयुर्विज्ञान एवं स्रोत डॉ. मेहजबीन सादड़ीवाला	71-74
7.	Appraisal of Historical writing on Maharana Kumbha, 1433-1468 A.D. Prof. V.K. Vashishtha	75-95
8.	Concept of Modern Civil Engineering in Kumbha's time (A case study of Rajvallabh Vastu Shastra) Dr. Manorma Upadhyaye	96-106

Scanned with CamScanner

अध्याय - 2 साहित्य

9. वैश्विक पुनर्जागरण का भारतीय अध्याय और महाराणा कुम्भा : साहित्यिक अवदान के संदर्भ में
डॉ. प्रतिभा 107-114

10. राजवल्लभ मण्डल : कुम्भा के आश्रय में लिखित रचना– 'राजवल्लभ'
नीलम श्रीमाली 115-121

11. ''संस्कृत साहित्य सृजन हेतु महाराणा कुम्भा कालीन स्वर्णिम युग''
प्रदीप कुमार मीणा 122-129

12. महाराणा कुम्भा का शिक्षा एवं साहित्य के विकास में योगदान
डॉ. नीलम मेनारिया 130-141

13. महाराणा कुम्भाकालीन साहित्य
डॉ. देव कोठारी 142-183

अध्याय - 3 संगीत

14. कुम्भा रचित वाद्यरत्नकोश : एक अध्ययन
डॉ.कुसुमलता टेलर 184-190

15. महाराणा कुम्भा और संगीत
डॉ. कुलशेखर व्यास, हितेष बुनकर, डॉ.अजातशत्रु शिवरती 191-194

16. भारतीय शास्त्रीय संगीत की पृष्ठभूमि में महाराणा कुम्भाकृत संगीतराज ग्रन्थ का गीतरत्नकोष
डॉ. सीमा राठौड़ 195-199

अध्याय - 4 स्थापत्य एवं मूर्तिकला

17. चित्तौड़ का कीर्ति स्तम्भ– महाराणा कुम्भा कालीन कला एवं स्थापत्य का महाकोष
डॉ. मीनाक्षी मेनारिया 200-210

Scanned with CamScanner

9

वैश्विक पुनर्जागरण का भारतीय अध्याय और महाराणा कुम्भा : (साहित्यिक अवदान के संदर्भ में)

प्रतिभा *

शस्त्र और शास्त्र में एक सी निपुणता, तलवार संचालन और वीणा-वादन में एक सी पारंगत्ता, भवानी और सरस्वती की सम आराधना; ये सभी उपादान जिस एक शासक में एकाकार प्रतीत होते हैं, वे हैं मेवाड़ के साधक-शासक महाराणा कुंभा, जिनकी बहुध्रुवीय मेधा भारत ही नहीं विश्व के इतिहास में भी दुर्लभ है। एक साथ राजगुरु, चापगुरु, दानगुरु, शैलगुरु और परमगुरु[1] हो सकना कुंभा के लिए ही संभव था। वह कुंभा ही थे, जिन्होंने अपने अद्‌भुत रण-कौशल और विजय अभियानों से न केवल मेवाड़ की सीमाओं को अभूतपूर्व विस्तार दिया, बल्कि रक्षात्मक निर्माणों से सामरिक, और धार्मिक निर्माणों से सांस्कृतिक-आर्थिक सुदृढ़ता भी सुनिश्चित की। यही नहीं, संगीत और साहित्य में भी अपने अमूल्य अवदान से देश और काल को समृद्ध किया। आजीवन युद्ध घोषों के बीच भी कला और साहित्य की साधना में लगे रहे।[2]

हर विलास शारदा ने अपनी पुस्तक में इस आश्चर्य को बहुत सुन्दर ढंग से अभिव्यक्ति दी है -It is marvellous how, while constantly engaged in warfare, defending his empire against his foes conquering new territories and adding them to Mewar, building forts, strengthening the defence of the country, the Maharana could find opportunities to develop his literary abilites and time to write poetry, compose dramas, annotate old poems and write treatise on the science of Music.

युद्ध, स्थापत्य कला, संगीत और साहित्य इनमें से किस क्षेत्र में कुंभा और उनके काल का अवदान सर्वाधिक है, यह निश्चय कर पाना अत्यन्त कठिन है तथापि तत्कालीन साहित्यिक अवदान स्वयं में विलक्षण है। वैश्विक पुनर्जागरण के समानांतर विकसित होने वाली भारतीय पुनर्जागरण की यह विविधमुखी साहित्यिक धारा अपने प्रत्येक रूप में श्रेष्ठतम प्रतिमान स्थापित करती है।

स्वयं महाराणा कुम्भा अद्‌भुत साहित्यिक प्रतिभा के धनी थे, जिन्होंने अपनी

* आचार्य, इतिहास विभाग, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर

Scanned with CamScanner

काव्य-रचनाओं, संगीत सम्बन्धी रचनाओं एवं विविध टीकाओं से ज्ञान-विज्ञान की भारतीय परम्परा को पोषित किया। एकलिंग माहात्म्य में उन्हें एक साथ वेद, स्मृति, मीमांसा, उपनिषद्, व्याकरण, राजनीति एवं साहित्य में निपुण कहा गया है।[4] इसी प्रकार कुंभा के नाटकों में संस्कृत के अतिरिक्त मराठी, कर्नाटी और मेवाड़ी भाषाओं का प्रयोग उन्हें बहुभाषी प्रवीण के रूप में स्थापित करता है।

शंका स्वाभाविक रूप से उपज सकती है कि यौवनारम्भ से ही संघर्ष और युद्ध को जिसने सहचर के रूप में पाया हो, साहित्य के साथ-साथ संगीत की साधना के संस्कार, अभ्यास एवं प्रणयन के लिए वह समय को कैसे साध पाया होगा? स्वयं भारतीय इतिहास में एतद्विध दृष्टान्त उपस्थित हैं। गुप्त सम्राट समुद्र गुप्त, जिसने निरन्तर अपने विजय अभियानों के द्वारा गुप्त साम्राज्य की सीमाओं को अभूतपूर्व विस्तार दिया, वह कविराज उपाधि प्राप्त और नारद-तुम्बरु को भी लज्जित कर देने वाला वीणा-निष्णात संगीतज्ञ था।[5] इसी प्रकार 'सकलोत्तरापथनाथ' सम्राट हर्षवर्धन नागानन्द, रत्नावली और प्रियदर्शिका नामक कालजयी नाटकों के रचयिता कवीन्द्र थे जो अपने काव्यों और कथानकों से अमृत की वर्षा करते थे।[7]

अत: कुंभा जैसी प्रतिभा के लिए यह सब कुछ साध पाना असंभव नहीं था। कुंभा के लिए प्रयुक्त श्री 'सरस्वती रसत समुद्र समुद्रभूतकैरवाद्यननायक' (सरस्वती जलधार में उद्भूत कमलकुंज का नायक), 'सर्वज्ञ' तथा 'प्रज्ञान-स्फूर्ति-केसरी' आदि विरुद[8] इस तथ्य की पुष्टि हेतु पर्याप्त हैं। कुंभलगढ़ प्रशस्ति के अनुसार भी कुंभा के लिए कविता लिखना उतना ही आसान अथवा सहज था जितना युद्ध के लिए जाना। यह और भी महत्वपूर्ण है कि कुंभा के वैदुष्य को यह मान्यता और प्रतिष्ठा अत्यन्त श्रेष्ठ समकालीन विद्वानों के आभामंडल में रहते हुए भी प्राप्त हुई।

महाराणा कुंभा के रचना-कर्म पर दृष्टि डाली जाए तो उन्होंने संगीतराज नामक 16000 श्लोकों वाले संगीत विषयक विशालतम एवं उत्कृष्टतम माने जाने वाले ग्रन्थ की रचना की तो सूड प्रबन्ध जैसा ग्रन्थ भी लिखा। गीतगोविन्द की बहुख्यात रसिकप्रिया नामक टीका, बाणकृत चंडीशतक पर टीका और संगीत रत्नाकर पर टीका लिखने का श्रेय भी उन्हें है। इसी प्रकार संगीत गोविन्द, वाद्य-प्रबंध, संगीत दीपिका, एकलिंगाश्रय, दर्शन संग्रह, हरिवार्तिक, कुम्भस्वामी मंदार जैसे अद्यावधि अप्राप्य ग्रंथों का भी प्रणयन उन्होंने किया। कुंभलगढ़ प्रशस्ति में वर्णित है कि महाराणा कुंभा ने 4 नाटकों की रचना की थी, जिनमें मराठी, कर्नाटी तथा मेवाड़ी भाषाओं का प्रयोग भी किया गया था।[9] एकलिंग माहात्म्य में विभिन्न राग-रागिनियों पर आधारित विविध देवी देवताओं की कुंभा रचित स्तुतियां संग्रहीत हैं तो कुंभा की कीर्तिस्तम्भ विषयक पुस्तक भी कीर्तिस्तंभ पर उत्कीर्ण थी, जिसका मात्र एक अंश ही वर्तमान में प्राप्त है।[10]

विषयवस्तु, शिल्प और भाषा सभी दृष्टियों से कुंभा के ये ग्रन्थ पर्याप्त महत्वपूर्ण हैं।

Scanned with CamScanner

संगीत, शिल्पशास्त्र, दर्शन, स्तुति और समालोचना से सम्बन्धित ये ग्रन्थ गद्य, पद्य, नाटक सभी रूपों में हैं। चित्तौड़ कीर्तिस्तम्भ प्रशस्ति से ज्ञात होता है कि महाराणा कुंभा नाटक, प्रकरण, अंक, वीथिका, नाटिका, समवकार, भाण और प्रहसन जैसे आठों प्रकार के नाट्य रूपों के प्रणेता थे, इसलिए इन्हें 'अभिनवभरताचार्य' कहा गया।[11]

इसी प्रकार महाराणा कुंभा के आश्रय में और उनके प्रेरण-प्रोत्साहन में भी रचनाकारों का एक विशाल समूह निरंतर साहित्य साधना में संलग्न था। स्वयं कुंभा रचित संगीतराज का नृत्यरत्नकोश कुंभा के दरबार में कई सम्मानित पंडितों, राजवैद्यों और ज्योतिषियों के रहने का उल्लेख करता है तो एकलिंग माहात्म्य के अनुसार कुंभा के अधीन एक संतुष्ट पंडित वर्ग ग्रंथ रचना में संलग्न था -

श्री कुंभसकलाभिलाषप्रदेशचसेवितुं प्राप्यते।[12]

एक ओर चित्तौड़, आबू, कुंभलगढ़, रणकपुर आदि में शिल्प को व्यावहारिक रूप दिया जा रहा था, तो दूसरी ओर उससे सम्बद्ध शास्त्रों की रचना द्वारा उनके सैद्धांतिक रूप भी तैयार हो रहे थे। राजेन्द्रशंकर भट्ट इस विषय में कहते हैं कि "ऐसा सुयोग कम होता है, इसे उलट-पलट कर दोनों तरह देखें कि जो पुस्तक में पृष्ठों में आता है, उसे पृथ्वी पर उतारा जाता है और यह सचमुच बहुत ही कम होता है कि जो पुस्तक रचना करता है उसी की सामर्थ्य से निर्माण आश्चर्य उद्भूत होते हैं। मंडन इस दृष्टि से कुंभा के साथ साथ उल्लेखनीय हैं, जैसे कुंभा ने कीर्तिस्तम्भ बनवाया और स्तम्भ निर्माण पर ग्रंथ रचा, उसी प्रकार जिसने कुंभलगढ़ बनाया, उसी ने स्थापत्य शास्त्र पर ग्रंथ सृजित किए।[13]

कुंभा काल के कई दुर्गों एव मंदिरों के शिल्पी सूत्रधार 'मंडन' ने नगर और राजमहल, मंदिर और मूर्ति आदि की निर्माण कला से सम्बद्ध प्रासाद मंडन, राजवल्लभ मंडन, देवता मूर्ति प्रकरण, वास्तुसार, रूपमंडन, वास्तुमंडन, आयतत्व आदि ग्रंथों की रचना की। तत्कालीन आवश्यकताओं-उपयोगिताओं के दृष्टिगत रचे गए ये ग्रंथ आज भी अपने रचनाकाल जितने ही प्रासंगिक हैं, क्योंकि उनके मूल्य सार्वभौमिक हैं। संस्कृत में रचे गए ये ग्रंथ विशेषज्ञों के एक वर्ग तक ही सीमित होने के बाद भी अपने विषय के अद्यावधि श्रेष्ठतम एवं प्रासंगिकतम ग्रन्थ हैं।[14]

मंडन के भाई 'नाथा' ने वास्तुमंजरी की रचना की तो उनके पुत्र 'गोविन्द' ने उद्धारधोरणी, कलानिधि, द्वारदीपिका आदि की।

एकलिंग माहात्म्य के प्रसिद्ध प्रणेता 'कन्ह व्यास' कुंभा के आश्रित थे। संकलन में स्पष्ट उल्लेख है कि कन्ह व्यास ने महाराणा कुंभा की आज्ञा (प्रेरणा) से इसकी रचना कुंभलगढ़ में की थी -

आनन्दवृद्धिदिपुराभिनंदी नंदीशवंदी नृपकुंभकर्णः।
तदाज्ञया प्रेरित एव कन्हव्यासो व्यधतारकमौक्तिकावलिः।।[15]

यही कन्हव्यास कुंभलगढ़ प्रशिस्त के भी रचनाकार (वर्णन शैली की निकटता के

Scanned with CamScanner

कारण) कहे जाते हैं और पंचायतन स्तुतियों के भी। महाराणा कुंभा के वेतनभोगी होने को ये सगर्व स्वीकार करते हैं'

श्रीकुम्भदत्तसर्वार्था गोविन्दसत्पथाः।
पंचाशिकार्थदासेन कन्हव्यासेन कीर्तिता।।[15]

इसी प्रकार कीर्तिस्तम्भ प्रशस्ति के रचयिता 'अत्रि' एवं 'महेश' कुंभाकालीन ख्यातनाम विद्वान पिता-पुत्र थे। मेवाड़ के अत्यन्त प्रतिष्ठित पंडित परिवार के वंशज अत्रि ने कीर्तिस्तंभ प्रशस्ति की रचना प्रारम्भ की थी, परंतु इनकी मृत्यु हो जाने के कारण इनके पुत्र महेश ने इसे पूरा किया।[17] अपने सूक्ष्म निरीक्षण, परिशुद्ध तिथिक्रम और अतिशयोक्ति रहित वर्णनों से प्रशस्ति इतिहास में विशिष्ट स्थान रखने वाले महेश ने आगे चलकर न केवल मेवाड़ की कई प्रशस्तियां रची, बल्कि मालवा की भी एक प्रशस्ति (रमास्वामी प्रशस्ति-सुल्तान ग्यासुद्दीन के सेनापति बहरा की खड़ावदा की बावड़ी की प्रशस्ति) लिखने का श्रेय उन्हें है।[18]

'कल्याण' वि.सं. 1500 की कड़िया की प्रशस्ति के रचयिता थे। प्रशस्ति की परिष्कृत भाषा इनकी विद्वत्ता सिद्ध करने के लिए पर्याप्त है। कल्याण के पिता मुरारी भी तत्कालीन विद्वानों में अग्रगण्य थे। कल्याण इस प्रशस्ति में उनका उल्लेख करते हुए कहते हैं-

वाक्यतर्कगतावहीन्द्र सुमतेः साहित्यरत्नाकरः।
श्रौतस्मार्त यतेः श्रयभरः श्रीमन्मुरारेः सुतः श्रीकल्याणकरो।।[19]

इसी प्रशस्ति में मेवाड़ महाराणाओं के परम्परागत गुरु 'तिल्हभट्ट' का भी वर्णन मिलता है।[20] 120 तीर्थों के वर्णन वाली तीर्थमाला के रयचिता 'मेहा' थे। कुंभा के समय के सबसे महत्वपूर्ण निर्माण कार्यों कुंभलगढ़ और रणकपुर जैन मंदिर के समय उपस्थित रहे मेहा ने इनका विवरण प्रस्तुत किया है।[21]

महाराणा कुंभा से प्रेरित-प्रोत्साहित धार्मिक साहित्य की भी विशिष्ट भूमिका इस रचनात्मक क्रांति में है। इसमें जैन साहित्य की विपुलता हमें चकित भी करती है और रोमांचित भी। स्वयं कुंभा के काल में ही कई प्रमुख जैनाचार्य हुए। इनकी कार्यस्थली राजस्थान और गुजरात थी और मेवाड़ की ये निरन्तर यात्राएं करते थे। प्रमुख रूप से तपागच्छीय और खरतरगच्छीय साधुओं द्वारा विशाल साहित्य रचा गया।

तपागच्छीय साधुओं में अग्रगण्य आचार्य 'सोमसुन्दर' युगप्रधान कहे जाते थे और उनका युग (1457-1499 वि.) सोमसुन्दर युग। इनके ग्रन्थों में भाष्यत्रयचूर्णि, कल्याणकस्तव, रत्नकोश, उपदेशबालावबोध, योगशास्त्रबालावबोध, षडावश्यकबालावबोध भाष्यत्रय अवचूरि, कल्याण स्तोत्र, षष्ठिशतकबाला, आराधना, पताकाबालावबोध आदि मुख्य थे। तपागच्छीय दूसरे प्रमुख आचार्य थे संस्कृत भाषा के अद्वितीय विद्वान 'मुनिसुन्दर' (1436-1499 वि.), जिनके द्वारा रचित अध्यात्म कल्पद्रुम मुख्य है। त्रिदशितरंगिणी, उपदेश रत्नाकर, स्तोत्र रत्नकोश, मित्र चतुष्टक, शांतिकरस्तोत्र,

Scanned with CamScanner

पाक्षिकासित्तरी, अंगुलीसित्तरी, वनस्पति सित्तरी, तपागच्छ पट्टावली, शांतिरसरास भी अन्य प्रमुख ग्रन्थ थे। इनमें से शांतिकर स्तोत्र, देलवाड़ा (मेवाड़) में रचा गया। इनके द्वारा रचित बालावबोध प्राप्त नहीं हो सके हैं।[23]

आचार्य सोमसुन्दर के शिष्यों में सोमदेव, जयचन्द्रसूरि, भुवनसुन्दरसूरि, आदि मुख्य थे। इनमें सोमदेव को महाराणा कुंभा द्वारा कविराज की उपाधि दी गई थी जिसका उल्लेख सोमसौभाग्य काव्य में प्राप्त होता है।[24]

दिगम्बर जैन सम्प्रदाय से जुड़े सन्तों द्वारा भी पुण्कल साहित्य की सर्जना की गई। 'सकलकीर्ति' ने संस्कृत के 28 और और राजस्थानी के 6 ग्रंथ लिखे। संस्कृत के ग्रंथों में आदिपुराण, उत्तरपुराण, शांतिनाथचरित्र, वर्धमानचरित्र, मल्लिनाथचरित्र, यशोधरचरित्र, धन्यकुमारचरित्र, सुकुमालचरित्र, आगमसार, श्रीपालचरित्र आदि हैं।[30]

वाद-विवाद निपुण एवं प्रतिपक्षियों के लिए अकाट्य प्रतिद्वन्द्वी सोमदेव की तुलना अपनी वक्तृता के कारण सिद्धसेन दिवाकर, बप्पभट्ट सूरि एवं हेमचन्द्राचार्य से की जाती थी। रणकपुर मंदिर की प्रतिष्ठा के समय 'वाचक' उपाधि से विभूषित आचार्य सोमदेव का महाराणा कुंभा ने उनकी कवित्व-कला के कारण सम्मान दिया था।[25]

इनके अतिरिक्त 'जिनहर्षगणि' वस्तुपालचरित,रत्नशेखर कथा तथा रयण सेहरी के लेखक थे। संभवत: मलिक मुहम्मद जायसी की पद्मावत का प्रेरणास्त्रोत रही, रत्नशेखर कथा में ही चित्तौड़ के रावल रत्नसिंह की रानी का नाम 'पद्मिनी' प्राप्त होता है, जो बाद के जैन कवियों हेमरत्न और लब्धोद्वय द्वारा लिया गया था।[26] इसी प्रकार जिनवर्धन, विशालरत्नगणि, जयशेखर सूरि, प्रतिष्ठासोम, रत्नमंदिरगणि, जयशेखर सूरि, लक्ष्मीसागर सूरि, माणिक्य सुन्दरगणि तथा शुभशील आदि ने विविध विषयों पर उत्कृष्ट ग्रन्थों की रचना की।[27]

एवमेव खरतरगच्छ में अनेक प्रभावशाली आचार्य और साहित्य साधक हुए। इन्होंने अपनी लेखनी से विभिन्न विषयों में सैकड़ों उत्कृष्ट रचनाएं प्रस्तुत कीं। इन्होंने जैनेतर विषयों पर भी लिखा, जिनमें व्याकरण, कोश, छन्द, अलंकार, ज्योतिष और वैदिक आदि अनेक विषय हैं। युग प्रधानाचार्य गुर्वावली में वर्तमान काल तक चौदह सौ वर्षों का वृत्तान्त प्राप्त होता है।[28]

खरतरगच्छीय ग्रन्थों में श्री जिनराज जी के समय में संग्रहीत आचारांगसूत्रचूर्णिको मेरुनन्दन उपाध्याय द्वारा लिखा गया। इसी प्रकार 'जिनवर्धन' जी के समय तात्पर्य परिशुद्धि ग्रन्थ लिखा गया। 'जयसागर' नामक अन्य कवि ने कई ग्रन्थ लिखे, जिनमें मुख्यत: स्ववन ग्रन्थ थे। 'जिनसागर सूरि' ने आवश्यक वृहद्वृत्ति का दूसरा खंड लिखा। इस पुस्तक की प्रशस्ति से ज्ञात होता है कि उस समय देलवाड़ा में भाण्डागार था, जहां पुस्तकें लिखकर संग्रहीत होती थीं। जिनसागर सूरि के शिष्य 'उदयशील' ने हेमलघुव्याकरण के चौथे अध्याय की वृत्ति बनाई। 'मेरुसुन्दर' नामक प्रसिद्ध साधु के अनेक बालावबोध प्राप्त होते

Scanned with CamScanner

हैं।

वृहदगच्छीय सन्त 'हीरानन्द' ने सुपार्श्वनाथचरित लिखा। कामराजरतिसार में भी किन्हीं 'हीरानन्दसूरि' का उल्लेख है, जो कामशास्त्र के ज्ञाता थे। इन्हें कुंभा द्वारा अपना गुरु माना गया था और कविराज की उपाधि दी गई थी।[29] आंचलगच्छ के जयकीर्ति के शिष्य 'ऋषिवर्धन' ने नलदमयन्तीरास की रचना की तो पिप्पलगच्छीय सन्तों ने भी विविध ग्रन्थ रचे। जैन साधु-साध्वियों के अतिरिक्त श्रावक साहित्यकारों ने भी इस काल के साहित्य भंडार में पर्याप्त योगदान किया।

इस प्रकार कुंभाकाल में शताधिक ग्रंथों की रचना के साक्ष्य प्राप्त होते हैं। किसी एक कालखंड के दृष्टिगत यह विपुल साहित्य स्वयं में अप्रतिम है। बाद के वर्षों में भी साहित्य-सर्जना की यह परम्परा सक्रम रही।

कुंभाकालीन शताधिक अभिलेख इस रचनात्मक उभार की ही अभिव्यक्ति हैं। कुंभलगढ़, चित्तौड़गढ़, बसन्तगढ़, आबू, देलवाड़ा, रणकपुर, नागदा, नांदिया, पदराड़ा आदि में मंदिरों, प्रतिमाओं, दानपत्रों, ताम्रपत्रों पर प्राप्त ये लेख तत्कालीन राजनैतिक-सामाजिक -आर्थिक स्थिति का लेखा-जोखा हैं। इनमें बहुत से अभिलेख नष्ट हो गए हैं, किन्तु कुछ की प्रतिलिपियां प्राप्त हैं। यथा चित्तौड़ के महावीर जैन मंदिर की चरित्र रत्नगणि द्वारा रचित प्रशस्ति रचना अब नष्ट हो चुकी है, परंतु 1508 वि. में की गई इसकी एक प्रतिलिपि डक्कन कॉलेज, पुणे में सुरक्षित है।[31]

इन अभिलेखों में महाराणा कुंभा के लिए प्रयुक्त विरुद्ध उनके बहुमुखी व्यक्तित्व के उपाख्यान हैं। कुंभाकालीन अनेक श्रेष्ठियों द्वारा भी शिलालेख स्थापित करवाए गए, जिनमें अमूल्य ऐतिहासिक दस्तावेज सुरक्षित हैं। अभी भी इन अभिलेखों पर ऐतिहासिक दृष्टि से पर्याप्त कार्य किया जाना शेष है। विशेष रूप से तत्कालीन साहित्य से इन अभिलेखों के तुलनात्मक अध्ययन के पश्चात् कुंभाकालीन इतिहास को और सुदृढ़ धरातल पर स्थापित किया जा सकता है। इस संदर्भ में जनश्रुतियों एवं मौखिक परम्पराओं में प्रतिध्वनित मान्यताओं की व्याख्या भी इतिहास की लुप्त कड़ियों की पड़ताल में सहायक हो सकती है।

इस विविध विषयी और बहुमुखी साहित्य भंडार के गहन अवलोकन से कुछ बिन्दु स्पष्ट परिलक्षित होते हैं -

प्रथम, यह विशाल साहित्य मात्र राज्याश्रित और राजप्रेरित ही नहीं था, वरन् लोक-नि:सृत और लोकोन्मुख भी था। स्वत: प्रेरणा के साथ-साथ सामाजिक प्रेरणा भी रचनाकार्य हेतु उद्यत करती थी। आचार्य जयसागर की रचनाओं से ज्ञात होता है कि उस समय मेवाड़ के देलवाड़ा ग्राम में भांडागार था, जहां पुस्तकें लिखाई जाती थी और संग्रहीत भी की जाती थीं।[31] मेवाड़ के जैन श्रेष्ठि वर्ग का भी इसमें अपूर्व योगदान था। रामदेव नवलखा के दामाद बीसल द्वारा क्रियारत्न समुच्चय की 10 प्रतियाँ लिखवाने तथा रामदेव

Scanned with CamScanner

की स्त्री मेलादे द्वारा जिनवर्धन सूरि के शिष्य पं. ज्ञान हंसमणि से सदेह दोलावली वृत्ति लिखवाने का उल्लेख मिलता है। पूर्ण रूप से स्वतंत्र धारा के रूप में प्रस्फुटित इस स्वदेशी साहित्य के लिए यह सर्वथा स्वाभाविक ही है कि वह लोकोन्मुख एवं लोककेन्द्रित था। मनुष्य एवं उसके विविध दैनन्दिनी आयामों, गतिविधियों को समर्पित था यह साहित्य। और यही तथ्य इसे कालबाह्य होने से बचाकर आधी सहस्राब्दी बाद भी प्रासंगिक बनाए हुए है।

तत्कालीन साहित्य के सम्बन्ध में एक और तथ्य अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इस सम्पूर्ण कालखंड में संस्कृत के साथ साथ प्राकृत और राजस्थानी के रूप में स्थानीय भाषाओं और जनभाषाओंको प्रमुखता दी गई। उस समय तक इस भाषा में रचनाएं होने लगी थीं। जैन साधुओं ने संस्कृत के साथ-साथ राजस्थानी में भी लिखा। उनके बालावबोध में बोलचाल की साधारण भाषा का गद्य प्राप्त होता है। सोमसुन्दर एवं मेरुसुन्दर के ग्रंथ प्राचीन राजस्थानी भाषा के नमूने हैं।[33] दिगम्बर जैन साधु सकलकीर्ति ने राजस्थानी में आराधना प्रतिबोधसार, नेमीश्वरगीत, मुक्तावलीगीत जैसे 6 ग्रंथ लिखे तो इनके शिष्य भुवनकीर्ति द्वारा लिखे 9 ग्रथों में नेमीराजुलगीत, जीवंधररास, जम्बूस्वामीरास, कलावती चरित्र प्रमुख हैं।

कुंभा ने मेवाड़ी को एक अलग भाषा के रूप में मान्यता दी। इन्होंने संगीतराज के पाठ्यरत्नकोष में मेवाड़ी भाषा का उल्लेख किया हैं। कुंभा रचित नाटकों में भी मेदपाटीय भाषा के प्रयोग का उल्लेखमिलता है। कुंभा ने गीत गोविन्द की मेवाड़ी टीका की। उसकी अलग-अलग प्रतियां बीकानेर, जोधपुर और उदयपुर में हैं, तीनों कुंभा द्वारा लिखी गई वर्णित हैं परन्तु तीनों में भिन्नता है। उदयपुर वाली प्रति में मेवाड़ी का स्पष्ट पुट है।

एकलिंग माहात्म्य में भी मेवाड़ी भाषा का प्रयोग प्राप्त होता है। स्पष्ट रूप से यह शास्त्रीयता के साथ साथ स्थानीयता और जन प्रयुक्तता को मान्यता प्रदान करना है।

अस्थिरता और झंझावतों से परिपूर्ण एक संक्रमण काल में घटित यह साहित्यिक क्रांति और भी महत्वपूर्ण हो जाती है, जब यह तत्काल विशेष के भव्य स्थापत्य और मूर्तिशिल्प से जोड़कर देखी जाती है।

चित्तौड़ कीर्तिस्तम्भ पर अंकित प्रतिमाएं स्वयं में प्रतिमा विज्ञान की पाठ्य पुस्तकें हैं और यही कारण है कि कुंभा के आकस्मिक अवसान के साथ रचनाधर्मिता का पटाक्षेप नहीं हुआ, बल्कि थोड़े ठहरावों और अन्तरालों के साथ आगामी 2-3 शताब्दियों तक यह रचनाधर्मिता मेवाड़ धरा को रस-सिक्त करती रही।

अत: कुंभा काल की विशाल साहित्यिक सम्पदा का विविध अभिलेखों और निर्माण कार्यों के आलोक में समग्र और सूक्ष्म अवलोकन, पूर्ण शोधन एवं मूल्यांकन किया जाना अत्यन्त आवश्यक है। निस्संदेह इससे कुंभा एवं उनके युग को इतिहास में अद्यावधि वह अप्राप्त स्थान प्राप्त हो सकेगा जिससे वे वस्तुत: अधिकारी हैं।

Scanned with CamScanner

एंडनोट

1. कीर्तिस्तम्भ प्रशस्ति, श्लोक 148
2. हर विलास शारदा, *महाराणा कुंभा,* पृ. 315।
3. एकलिंग माहात्म्य, 172, 173
4. कीर्तिस्तम्भ प्रशस्ति, श्लोक 157
5. विद्वज्नोपजीव्यानेककाव्यक्रियाभि: प्रतिष्ठितककविराजशब्दस्य हरिषेण रचित प्रयाग प्रशस्ति, (*प्राचीन भारत का इतिहास,* वी.सी. पाण्डेय, केदारनाथ रामनाथ पब्लिकेशन, मेरठ, पृ. 61 पर उद्धत)
6. निशितविदग्धमतिगान्धर्वललितै: व्रीडितत्रिदशपतिगुरुतुम्बुरुनारदादे: (*प्राचीन भारत का इतिहास,* वी.सी. पाण्डेय, केदारनाथ रामनाथ पब्लिकेशन, मेरठ, पृ. 61 पर उद्धत)
7. ''काव्यकथास्वपीतममृतद्रमुमतम्'', बाणभट्ट चरित, (*प्राचीन भारत का इतिहास,* वी.सी. पाण्डेय, केदारनाथ रामनाथ पब्लिकेशन, मेरठ, पृ. 256 पर उद्धत)
8. राजेन्द्रशंकर भट्ट, *महाराणा कुंभा,* राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, नई दिल्ली, पृ. 213
9. कीर्तिस्तम्भ प्रशस्ति, श्लोक 157
10. साध्वी डॉ. हर्षप्रभा, *कुंभाकालीन जैन साहित्य,* स्वाति पब्लिकेशन्स, उदयपुर, पृ. 32-33
11. कीर्तिस्तम्भ प्रशस्ति, श्लोक 165
12. रामवल्लभ सोमानी, *महाराणा कुंभा,* हिंदी साहित्य मंदिर, मेड़ती गेट, जोधपुर, 1968, पृ. 220
13. राजेन्द्र शंकर भट्ट, *महाराणा कुंभा,* राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, नई दिल्ली, पृ. 259
14. वही, पृ. 267
15. एकलिंग माहात्म्य, 61
16. स्तुति - 66
17. कीर्तिस्तंभ प्रशस्ति, श्लोक 183
18. रामवल्लभ सोमानी, *महाराणा कुंभा,* हिंदी साहित्य मंदिर, मेड़ती गेट, जोधपुर, 1968, पृ. 220
19. वही, पृ. 223
20. वही, पृ. 223
21. राजेन्द्र शंकर भट्ट, *महाराणा कुंभा,* राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, नई दिल्ली, पृ. 253-56

ooo

Scanned with CamScanner